पूर्वोत्तर के भूले-बिसरे चित्र: कृति नहीं,संग्रहणीय दस्तावेज

समीक्षक

डॉ. बिपिन पाण्डेय

रूड़की, उत्तराखंड

समीक्ष्य कृति: पूर्वोत्तर भारत के भूले-बिसरे चित्र (आलेख संग्रह)

लेखक: चितरंजन भारती

प्रकाशन वर्ष: जनवरी 2024 (प्रथम संस्करण)

प्रकाशक: इंक पब्लिकेशन, प्रयागराज-16

मूल्य : ₹ 250/- पेपरबैक

चित्तरंजन भारती जी मूलतः बिहार के रहने वाले हैं लेकिन आपकी कर्मभूमि पूर्वोत्तर भारत रहा है। भारती जी एक ऐसे साहित्यकार हैं जिन्होंने अपनी कर्मभूमि को बड़ी शिद्दत के साथ जिया है। पूर्वोत्तर भारत से संबंधित आपकी अनेक कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। इससे पूर्व मुझे 'पूर्वोत्तर का दर्द' और 'कर्त्तव्य-बोध' (कहानी संग्रह) पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आपने अपना सद्यः प्रकाशित आलेख संग्रह 'पूर्वोत्तर के भूले-बिसरे चित्र' मुझे प्रेषित किया। इस कृति से गुजरते हुए मुझे अनेक ऐसे तथ्य ज्ञात हुए जिनसे मैं अब तक अपरिचित था। इतना ही नहीं यदि इन तथ्यों से किसी अन्य माध्यम से परिचित होने का अवसर प्राप्त भी होता तो इतनी भावप्रवण भाषा और लालित्य का संभवतः अभाव ही रहता।

इस कृति में कुल तेईस महत्वपूर्ण आलेख हैं, जो पूर्वोत्तर भारत की समृद्ध सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विरासत को समझने में मददगार सिद्ध होते हैं। ये आलेख हैं- एक हिंदी सेवी का जाना- रमण शांडिल्य, चाय-बागान की छाँव में, असम के तुलसी: शंकरदेव, माधव कंदली के राम , असमिया और नागरी लिपि में संबंध, असम डायरी के पन्ने , राजधानियों का शहर शिवसागर, सेना किसी समस्या का हल नहीं है , अमर शहीद मनीराम दीवान , असम के विद्वान, वीरेंद्र भट्टाचार्य, अंतिम कछारी राजा का अवसान, असम का बेतरतीब शहर शिलचर, बराक घाटी, हिंदी और नराकास, उ तिरोत सिंघ मेघालय, अरुणाचल की ओर, स्वतंत्रता और गणतांत्रिक मूल्यों की मसीहा रानी गाइदिन्ल्यू, डिमापुर, नागालैंड में हिंदी शिक्षण, नागालैंड के समाज सेवक नटवर ठक्कर, मणिपुर का बाघ- टिकेन्द्रजीत सिंघ, मेरी नज़र में पूर्वोत्तर, चीन से झाबुआ तक की चाय यात्रा, शिलचर से इंफाल की वह रोमांचक यात्रा और अंतिम आलेख है बराक घाटी और हिंदी संस्कृति।कृति की प्रस्तावना में चितरंजन भारती जी ने पूर्वोत्तर के संबंध में ऐतिहासिक जानकारी प्रदान करते हुए इस बात पर प्रकाश डाला है कि पूर्वोत्तर के राज्यों में हिंदी की स्थिति क्या है? साथ ही लेखक ने इस बात को स्वीकार किया है कि 'मेरे ये आलेख किसी संपूर्णता के द्योतक नहीं हैं। पूर्वोत्तर में अनेक दुर्लभ

चीजें हैं ,जो मेरी जानकारी में नहीं हैं।' इस संबंध में निर्विवाद रूप से यह कहा जा सकता है कि पूर्वोत्तर से जुड़े और रुचि रखने वाले साहित्यकार अपनी भूमिका का निर्वहन करते हुए, अपनी रचनाओं के माध्यम से उन तथ्यों को देश के समक्ष लाएँ जो इन राज्यों की सामाजिक और सांस्कृतिक धरोहर को समझने में सहायक हों। इससे हमें समग्रता में देश के विभिन्न प्रांतों के बारे में जानकारी जुटाने में सुविधा होगी।

इस कृति में सम्मिलित किए गए सभी आलेख पूर्वोत्तर भारत को समझने की दृष्टि से उपयोगी एवं महत्वपूर्ण हैं। पहला आलेख है- 'एक हिंदी सेवी का जाना रमण शांडिल्य'। रमन शांडिल्य जी ने अपना कैरियर एक हिंदी अध्यापक के रूप में आरंभ किया। अरुणाचल प्रदेश और मेघालय प्रांतों के लोग संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग सहज रूप में करने के पक्षधर रहते हैं लेकिन स्थानीय नौकरशाही का प्रभाव उन्हें ऐसा करने से रोकता है। रमन शांडिल्य जी द्वारा पुरजोर तरीके से इस बात का विरोध दर्ज कराया गया। उन्होंने इस संबंध में राष्ट्रीय स्तर के पत्र-पत्रिकाओं में अनेक लेख लिखे और अपनी बात लोगों तक पहुँचाने का काम किया। हिंदी के प्रचार-प्रसार के काम में लगे इस हिंदी सेवी विभूति को अनेकानेक समस्याओं का सामना करना पड़ा किंतु कोई भी समस्या उन्हें अपने काम से डिगा नहीं पाई।

असम के तुलसी: शंकरदेव आलेख में भारती जी ने मध्यकाल के कवि शंकरदेव जी के विषय में शोधपरक जानकारी उपलब्ध कराई है। शंकरदेव जी का जन्म सन 1449 में नगाँव जिले के बरदोया गांव में एक सम्पन्न जमींदार घराने में हुआ था। आपने गया, काशी, प्रयाग, मथुरा, वृंदावन आदि की ही नहीं बल्कि पुरी और रामेश्वरम आदि स्थानों की यात्रा की थी। इस बात का सहज रूप में अनुमान लगाया जा सकता है कि जब न तो आवागमन के साधन थे और न संचार की कोई व्यवस्था थी तो उस समय ये भक्त साधुजन किन परिस्थितियों में और कैसे पैदल यात्रा करते हुए एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचते होंगे। कबीर, नानकदेव, चैतन्य, रामानुजाचार्य, वल्लभाचार्य, सूरदास आदि भक्त कवि उनके समकालीन थे। आपने " एक शरण नाम धर्म " का प्रवर्तन किया था । शंकरदेव जी की रचनाओं में बरगीत, रुक्मिणी हरण काव्य, गुणमाला, अकीया नाट विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनकी श्रेष्ठ रचना 'कीर्तन' मानी जाती है, जिसे असमिया वैष्णव पंथ का आधार कहा जा सकता है। बरगीत जिसकी भाषा ब्रजबुली (ब्रजभाषा) है के माध्यम से असमी लिपि में सृजन कर असम के प्रत्येक घर में लोक प्रिय बना दिया। शंकरदेव जी का यह कार्य ठीक उसी प्रकार से था जिस प्रकार गोस्वामी तुलसीदास जी ने अवधी भाषा में रामचरित मानस की रचना कर लोगों में भक्ति की भावधारा प्रवाहित की थी।

'असमिया और नागरी लिपि में संबंध' आलेख में लेखक ने इस बात पर प्रकाश डाला है कि किस प्रकार असमिया भाषा का विकास हुआ और बांग्ला और असमिया का विवाद उत्पन्न हुआ। असमिया को बांग्ला की एक बोली होने के दावे को खारिज कर उसे एक स्वतंत्र भाषा का दर्जा न्यायालय के माध्यम से सन

1874 में प्राप्त हुआ। लेखक का मत है कि यदि शंकरदेव की परंपरा को ध्यान में रखा जाता और असमिया ने लिपि के रूप में देवनागरी को अपनाया होता तो इस भाषा का विकास अधिक तेजी के साथ होता।

'सेना किसी समस्या का हल नहीं' नामक आलेख के माध्यम से चितरंजन भारती जी ने अमल प्रभा दास जी के बारे में रोचक जानकारी साझा की है। अमल प्रभा दास जी को लोग प्यार से 'बाइदेऊ' कहते थे। बाइदेऊ का अर्थ है- बड़ी बहन। अमल प्रभा दास जी ने समाज सेवा के लिए 'शरणिया आश्रम' की स्थापना की थी। आपके समाज सेवा के कार्यों को देखकर पद्म भूषण सम्मान से अलंकृत करने का निर्णय भारत सरकार द्वारा लिया गया तो उन्होंने विनम्रतापूर्वक अस्वीकार कर दिया और समाज सेवा के क्षेत्र में दिया जाने वाला 'जमना लाल बजाज पुरस्कार' ग्रहण कर लिया। गाँधीवादी विचारों के प्रचार-प्रसार के लिए आपने पूर्वोत्तर भारत के कोने-कोने की यात्रा की। इस महान विभूति से इस पुस्तक के लेखक को दर्शन लाभ का अवसर मिला है जो कि अपने आप में एक बहुत महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

'असम का बेतरतीब शहर शिलचर' आलेख में लेखक ने शिलचर शहर के विषय में महत्वपूर्ण ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और समसामयिक जानकारी उपलब्ध कराई है। इस शहर से थोड़ा-बहुत परिचय मेरा भी है। जब 1994 में मैंने केंद्रीय विद्यालय संगठन में पी जी टी हिंदी के रूप में कार्यभार ग्रहण किया था तब मुझे शिलचर जाने का अवसर प्राप्त हुआ था क्योंकि केंद्रीय विद्यालय संगठन का संभागीय कार्यालय शिलचर में ही था। मेरी पहली पोस्टिंग शिलचर से लगभग 28 किलोमीटर पहले शिलांग -शिलचर मार्ग पर अवस्थित पंचग्राम में हुई थी। उस समय शिलचर ही एक मात्र ऐसा स्थान था जहाँ से चीजों को खरीदा जा सकता था। अतः रोजमर्रा की चीज़ों को क्रय करने के लिए शिलचर जाना ही पड़ता था। उस समय शिलचर में मॉल कल्चर नहीं था। समय के साथ बदलाव तो होता ही है। लेखक ने अपने आलेख में शिलचर में होने वाले उस परिवर्तन को रेखांकित किया है।

'बराक घाटी, हिंदी और नराकास' आलेख में चितरंजन भारती ने बराक घाटी में नराकास (नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति) के माध्यम से केंद्र सरकार के अंतर्गत आने वाले कार्यालयों में हिंदी के प्रयोग को लेकर किए जाने वाले प्रयासों को रेखांकित किया है। नराकास एक ऐसा संगठन है जिसके ऊपर गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा केंद्र सरकार के कार्यालयों में हिंदी के प्रयोग को लेकर किए जाने वाले प्रयासों का लेखा-जोखा इकट्ठा करने की जिम्मेदारी होती है। समिति से जुड़े हुए कार्यालय चूँकि हिंदी के प्रयोग और आँकड़े भेजने को लेकर टाल-मटोल का रवैया अपनाते हैं और नराकास के पास ऐसी कोई वैधानिक शक्ति भी नहीं होती है जिससे वह संबद्ध कार्यालयों को बाध्य कर सके तो गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, भारत सरकार के इस प्रयास से कोई विशेष लाभ राजभाषा हिंदी का नहीं हो रहा है। हाँ, धीरे-धीरे समय के साथ स्थितियों में बदलाव आ रहा

है। इस आलेख में तत्कालीन कछार पेपर मिल ,पंचग्राम,राजभाषा अधिकारी और नराकास सचिव डाॅ प्रमथ नाथ मिश्र जी के हिंदी के प्रयोग और प्रचार-प्रसार को लेकर किए गए प्रयासों को भी रेखांकित किया गया है।

मणिपुर का बाघ टिकेन्द्रजीत सिंघ आलेख में असम के अहम एवं कछारी राज्यों और मेघालय को अपने कब्जे में करने के बाद ब्रिटिश सरकार की दृष्टि मणिपुर पर पड़नी थी। इतिहास को बदलने में अंग्रेजों ने धूर्तता और क्रूरतापूर्ण तरीके से अमली जामा पहनाया था। किंतु मणिपुरी राजकुमार टिकेन्द्रजीत सिंह के सूझ-बूझ और प्रयासों के परिणामस्वरुप वह कुछ समय के लिए बचा रहा। इस आलेख में टिकेन्द्रजीत जी के पराक्रम और शहादत को बताने का प्रयास किया गया है।

इस पुस्तक का अंतिम आलेख है 'बराक घाटी और हिंदी संस्कृति' में लेखक ने सर्वप्रथम बराक घाटी के इतिहास से पाठकों को परिचित कराया है। यह आवश्यक भी है क्योंकि किसी भी स्थान की समसामयिक स्थिति को समझने के लिए उसके इतिहास से परिचित होना बहुत जरूरी होता है। जिस प्रकार बिहार, झारखंड, उड़ीसा और दक्षिण के आदिवासी इलाकों से 'गिरमिटिया मजदूर' के रूप में लोगों को मॉरीशस, फिजी, फ्रेंच गुयाना आदि जगहों पर भेजा जा रहा था। लगभग उसी प्रकार इस घाटी में भी लोगों को लाया गया था। इन सभी की भाषा हिंदी या हिंदी की बोलियाँ थीं जिसका प्रयोग लोग आपस में करते थे। लेखक ने स्पष्ट किया है कि 'तमाम तकलीफों के बावजूद चाय बागान में भारतीय सभ्यता और संस्कृति ,रहन-सहन और बोली-बानी को बचाकर रखने का सराहनीय प्रयास मजदूरों ने किया है। हिंदीभाषी समाज के तीज-त्यौहार, होली-दिवाली और छठ भी इधर धूमधाम से मनाए जाते हैं।'

पूर्वोत्तर भारत को समझने में सहायक इस पुस्तक के सभी आलेख महत्वपूर्ण हैं। इन आलेखों की भाषा सहज-सरल और बोधगम्य और नवीन जानकारी से परिपूर्ण हैं। अपने आलेखों में चितरंजन भारती जी ने एक ओर पूर्वोत्तर की उन महान विभूतियों को शब्दबद्ध किया है जिन्होंने इस क्षेत्र की आजादी को बनाए रखने के लिए अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया तो दूसरी तरफ साहित्य और समाज सेवा के माध्यम से इस क्षेत्र के लोगों की तरक्की एवं उत्थान में योगदान करने वाले महापुरुषों पर लेखनी चलाकर उनके अवदान को जनसामान्य तक पहुँचाने का प्रयास किया है। पुस्तक के आलेखों से गुजरते हुए यह बात साफ होती है कि लेखक ने अपना नज़रिया सदैव सकारात्मक ही रखा है। किसी प्रकार का दुराग्रह या तंगदिली न होने से चीज़ों को वस्तुपरक रुप में देखने में मदद मिलती है।

इस महत्वपूर्ण कृति का प्रणयन कर पूर्वोत्तर भारत के अछूते पहलुओं से परिचित कराने के लिए चितरंजन भारती जी को अशेष शुभकामनाएँ! आप इसी तरह साहित्य की श्रीवृद्धि करते रहें।

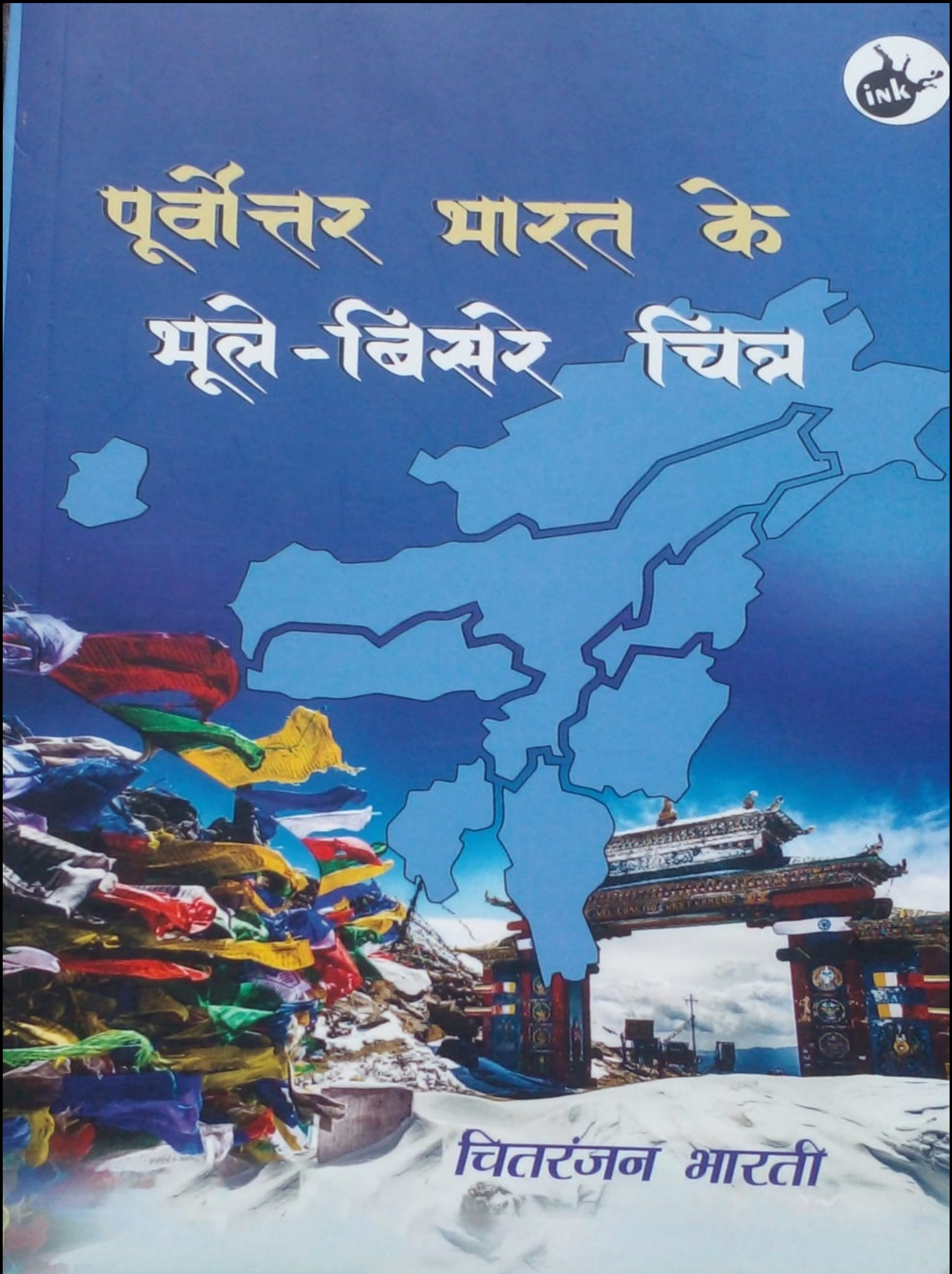
ink
पूर्वोत्तर भारत के
भूले-बिसरे चित्र
चितरंजन भारती